International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 10 Issue 3, May-June, 2022, Impact Factor: 7.326

कबीर की सार्वभौमिकता

डॉ. सरला देवी

असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी), राजकीय महाविद्यालय दूबलधन (झज्जर)

संत कबीरदास निर्गुण काव्यधारा की ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रवर्तक हैं, जो एक व्यक्ति ना होकर स्वयं में एक दर्शन है। संत कबीरदास अप्रतिम प्रतिभा के धनी है, उनका जन्म एक ऐसे समय में हुआ जब समाज अनेक प्रकार की विद्रूपताओं से ग्रसित था। धार्मिक पाखंड उस समय अपनी चरम सीमा पर था। हिंदू–मुस्लिम धर्म के नाम पर लड़ते–झगड़ते रहते थे। अंधविश्वास, छुआछूत की भावना लोगों में प्रबल थी। ऐसे समय में कबीरदास का प्रादुर्भाव हुआ, लेकिन उन्होंने इन परिस्थितियों से ना घबराकर ड़टकर इसका विरोध किया। संत कबीरदास पर बौद्ध धर्म का प्रभाव परिलक्षित होता है, जिस प्रकार बौद्ध धर्म ने वर्ण–भेद का विरोध करते हुए समस्त भारत मेंसामाजिक एकता की स्थापना का प्रयास किया। समाज में रूढ़ियो एवं अंधविश्वासों के विरुद्ध आवाज उठाकर मानव समानता और स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त किया एवं उच्च नैतिक आदर्श प्रस्तुत किए। भारत की राजनीतिक एकता और सांस्कृतिक महत्व को बढ़ाने का श्रेय बौद्ध धर्म को जाता है। उसी धर्म का अनुकरण संत कबीरदास ने भी किया है और कबीरदास के मार्ग का अनुसरण डॉक्टर भीमराव अंबेडकर ने किया है।

कबीरदास हिंदी के महान कवियों में से एक है। कबीर के काव्य में अनुभूति की गहराई और अभिव्यक्ति का खरापन देखने को मिलता है, जिसके कारण कबीर को लोकप्रियता प्राप्त हुई। कबीरदास का आविर्भाव भले ही आज से 600 वर्ष पूर्व हुआ हो, लेकिन उनकी वाणी या उनकी शिक्षाएं बदलते समय के साथ आज भी रुचिकर है क्योंकि साहित्य मेंजो रस होता है वह हमेशा विद्यमान रहता है। प्रत्येक पठन–पाठन से उसमें नवीन अर्थ व बोध प्राप्त होता है। इसलिए साहित्य सार्वकालिक सार्वभौमिक होता है। इस शोधपत्र के लेखन का मेरा उद्देश्य भी कबीरदास की सार्वभौमिकता को स्पष्ट करना है। सार्वभौमिकता का अर्थ होता है –सर्वव्यापकता। सार्वभौमिकता वह विचार है जो यह मानता है कि कुछ तथ्य ऐसे होते हैं जो सभी देश काल में सत्य होते हैं। अगर इस दृष्टि से विचार करें तो कबीर सार्वभौमिक है क्योंकि आज के इस वैज्ञानिक युग में भले ही हमने उन्नति कर ली हो लेकिन मानवता की दृष्टि से हमने जरा भी प्रगति नहीं की है। समाज में आज भी जाति प्रथा की जड़ें मजबूत हैं और धार्मिक विद्वेष फैला हुआ हैं। सामाजिक विषमता की खाई को पाटकर समरसता अपनी जगह बना पाई है। परिस्थितियां पहले की भांति बनी हुई है इसलिए कबीर ने जो शिक्षाएं तत्कालीन समय में दी थी वह शिक्षाएं आज भी आवश्यक है।

आज के युग में भी राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक परिस्थितियाँ वैसी ही हैं जैसे कबीरदास के युग में थी। उनके समय में भी लोग धर्म के नाम पर ईश्वर के नाम पर और मंदिर–मस्जिद के नाम पर एक–दूसरे से झगड़ा करते थे। हम देखते हैं कि आज भी यहीं सब कुछ हो रहा है। कबीरदास ने हिंदू–मुसलमानों दोनों ही के पाखंडों का खंडन किया और उन्हें सच्चे मानव–धर्म को अपनाने के लिए प्रेरित किया। हिंदुओं को फटकारते हुए उन्होंने कहा कि तुम अपने मटके को किसी को छूने नहीं देते, तुम अपने आपको इतना श्रेश्ठ समझते हो, लेकिन तुम्हारी वो श्रेष्ठता कहां गायब हो जाती है जब तुम वैश्यागमन करते हो।

जैसे – ''हिंदू अपनी करे बढ़ाई, गागरी छुअन न देई।
वैश्या के पायन तर सोवे, यह देखो हिंदूआई।।''[1]

इसी प्रकार मुसलमानों के पाखंड का भी खंडन करते हुए कबीरदास ने कहा है कि तुम मस्जिद के ऊपर चढ़कर जोर–जोर से अल्लाह–अल्लाह पुकारते हो क्या तुम्हारा ईश्वर बहरा हो गया है। जैसे–

''कांकर–पाथर जोरिं कै, मसजिद लई चुनाय। ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय।।''[2]

कबीरदास का युग सामाजिक विश्रृंखलता का युग था। उस समय ब्राह्मण वर्ग जातीय अभिमान से ग्रस्त था। यह अपने आप को श्रेष्ठ और शूद्रों को निम्न मानता था। इसलिए समाज मेंछुआछूत की भावना प्रबल थी। कबीर ने इसका तीव्र विरोध किया। उन्होंने कहा कि उच्च कुल मेंजन्म लेने से ही कोई ऊचां नहीं बनता, जो अच्छे कार्य करता है, श्रेश्ठ वही कहलाता है। यदि सोने के कलश में मदिरा डाल दी जाए तो भी साधु जन उसकी निंदा ही करते हैं।

जैसे – ''ऊँचे कुल का जनमिया करनी ऊँची ना होय।
सुबरन कलस सुरा भरा साधु निन्दत सोय।।''[3]

यह श्रेश्ठता की भावना क्या आज के युग मेंसमाप्त हो गई है ? अर्थात् नहीं। समाज मेंथोड़ा बहुत सुधार अवश्य हुआ है, लेकिन यह समूल नष्ट नहीं हुई है। इसलिए कबीर की शिक्षा आज भी हमारा मार्गदर्शन करती हैं।

कबीरदास पढ़े– लिखे नहीं थे, लेकिन फिर भी उनका अनुभवजन्य ज्ञान किसी शिक्षित विद्वान से कम नहीं था। उन्होंने जो अपनी आंखों से देखा उस सत्य को अपनी वाणियों मे व्यक्त किया न कि शास्त्र में बताई गई बातों के अनुसार। शास्त्र के पडितों को चुनौती देते हुए कबीर लिखते हैं –

''तू कहता कागद की लेखी मैं कहता आंखिन की देखी।
मैं कहता सुरझावन हारी, तु राखा उरझोय रे।।''[4]

कबीरदास की वाणियाँ बड़ी अनूठी है, उनके उपदेश सार्वकालिक है। उन्होंने अपनी वाणियों के माध्यम से विश्व में बंधुता और मानवता का संदेश दिया, उन्होंने समस्तजन को अपना उपदेश साधु–संतों के माध्यम से दिया है। इसलिए हम उनके पदों में 'कहंहि कबीर सुनो भाई साधो' जैसी पंक्तियां बार–बार देखते हैं।

कबीरदास अपने समय के सर्वाधिक संवेदनशील और जागरूक कवि थे। समाज की ऐसी कोई गतिविधि नहीं थी जो उनकी पैनी दृष्टि से ओझल रह गई। धर्म के नाम पर फैले बाह्यचारों की उन्होंने तीखी आलोचना की। उन्होंने एक ओर हिंदू धर्म में प्रचलित जप–तप, छापा–तिलक, तीर्थ स्थान एवं अन्य कर्मकांडों को निस्सार बताया वहीं दूसरी तरफ मुस्लिम धर्मानुयायिओं द्वारा नमाज, रोजा और धर्म के नाम पर की जाने वाली हिंसा की निंदा की है। उन्होंने बाह्यचारों के खंडन के साथ–साथ उन कर्मकाडों की भी निंदा की है जो मनुष्य को मनुष्य से अलग मानते हैं। धार्मिक रूढ़ियों में जकड़ कर मनुष्य बंधुत्व के गुणों से हीन हो जाता है। यह बाह्याडम्बर अहं को जन्म देते हैं और उसी अहं से मनुष्य अपने को परम ज्ञानी मान लेता है, दानी समझ लेता है तो किसी को तपस्या का अभिमान हो जाता है। कबीरदास कहते हैं कि जो व्यक्ति आत्मतत्व को नहीं पहचानता तो बाह्याडम्बरों से क्या लाभ ? ऐसे अज्ञानी गुरुओं की शरण में आए हुए शिष्यों को अंत में पछतावा ही होता है। जैसे –

''साधों, जे देखो जग बौराना।
साँची कहौ तौ मारन धावै झूँठे जग पतियाना।
हिंदू कहत है राम हमारा मुसलमान रहमाना।
आपस मैं दोऊ लड़े मरतु हैं मरम कोई नहिं जाना।
बहुत मिले मोहिं नेमी धर्मी प्रात करैं असनाना।
आतम–छोड़ि पशानै पूजैं तिनका थोथा ज्ञाना।
आसन मारि डिंभ धरि बैठे मन में बहुत गुमाना।
पीपर–पाथर पजू न लागे तीरथ–ब्रत भुलाना।
माला पहिरे टोपी पहिरे छाप–तिलक अनुमाना।
साखी सब्दै गावत भूले आतम खबर न जाना।
घर–घर मंत्र जो देन फिरत है माया के अभिमाना।
गुरूवा सहित ि ाश्य सब बूढ़े अंतकाल पछिताना।।''[5]

कबीरदास एक स्वस्थ, संतुलित व्यवस्था के पक्षधर थे। इसलिए तो ज्ञान रूपी हाथी की सवारी करके सामाजिक और नैतिक रुढ़ियों तथा बाह्यडम्बारों के जंजालों पर टूट पड़े और एक योद्धा की भांति अंत तक संघर्ष करते रहे। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में – ''वे समस्त बाह्यचारों के जंजालों और कु–संस्कारों को विध्वंस करने वाले क्रांतिकारी थे। समझौता उनका रास्ता नहीं था।''[6]

कबीर की दृष्टि मेंईश्वर एक है। उसे राम, रहीम, करीम, अल्लाह किसी भी नाम से पुकारे। कबीर प्रश्न करते हैं कि ईश्वर एक है तो फिर यह दो जगदीश कहाँ से आ गए ? और किसने यह भ्रम पैदा किया ? ईश्वर के नाम अनेक हो सकते हैं लेकिन ईश्वर एक ही है इस संदर्भ में वे लिखते हैं –

''(भाई रे) दुई जगदीश कहाँ ते आया, कहु कवने भरमाया।
अल्लाह, राम, करीमा केसो, (ही) हजरत नाम धराया।।
गहना एक कनक तें गढ़ना इनि महँ भाव न दूजा।
कहन–सुनन को दूरी करि पापिन, इक निमाज इक पूजा।।''[7]

कबीरदास एक जबरदस्त क्रांतिकारी महामानव थे उन्होंने सर्व–धर्म समभाव का संदेश दिया। कबीरदास ने भक्ति का संदेश दिया। भले ही उन्होंने भक्ति संदेश दिया लेकिन वो एक भक्त और एक कवि से पहले एक सच्चे समाज–सुधारक थे। उनकी वाणियों में समाज–सुधार की भावना स्पष्ट परिलक्षित होती है। हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं – ''भक्ति तत्व की व्याख्या करते–करते उन्हें उन बाह्यचारों के जंजालों को साफ करने की जरूरत महसूस हुई है। जो अपनी जड़ प्रकृति के कारण वि ाुद्ध चेतन–तत्व की उपलब्धि में बाधक है। यह बात ही समाज–सुधार और सांप्रदायिक ऐक्य की विधात्री बन गई है।''[8]

बाह्य धर्माचारों को अस्वीकार करने का अदम्य साहस लेकर कबीरदास का आविर्भाव हुआ। इन धर्माचारों को स्वीकार ना करना कोई विशेष उपलब्धि नहीं है बल्कि किसी बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के मार्ग में आने वाली रुकावट को अस्वीकार करना

उनकी महती उपलब्धि है। संत कबीरदास ज्ञान रूपी तलवार को लेकर, भील के स्नेह को धारण करके, अपना सिर हथेली पर लेकर आजीवन एक सच्चे शूरवीर की भांति इन रूढ़ियों और कु–संस्कारों से जूझते ही रहे –

''सील से नहे करि ज्ञान को खंग ले
आय चौगान में खेल खेलै।
कहैं कब्बीर सोई संत जन सरू मा,
सीस को सौंप करि करम ठेलै।।''[9]

संत कबीरदास एक सच्चे समाज सुधारक थे, लेकिन इसे समाज सुधार की बजाय एक क्रांति कहे तो यह ज्यादा न्याय संगत होगा और इस क्रांति के प्रणेता थे कबीर, जो जाति से जुलाहा और सामाजिक श्रेणी से शुद्र थे। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – ''हिंदीसाहित्य के इतिहास मेंकबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ।''[10]

बच्चन सिंह कहते हैं – ''कबीर का प्रादुर्भाव एक घटना है। हिंदी भक्ति काव्य का प्रथम क्रांतिकारी पुरस्कर्ता। वह भी मुसलमान। किंतु इतिहास में कुछ भी सहसा घटित नहीं होता। कबीर ने जो कुछ किया, उसके पीछे एक परंपरा है, इतिहास की एक सामंती मंजिल है, मुल्ला पंडितों का वर्चस्व है, किंतु कबीर के व्यक्तित्व में वह ताकत थी, जिसमें सामंती व्यवस्था के सरमायादारों की मूर्ति तोड़ने में वे एक सीमा तक सफल हुए, लेकिन इसके लिए उन्हें भारी कीमत चुकानी पड़ी।''[11]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम संक्षेप मेंकहे तो जीवन का ऐसी कोई अंग नहीं जो उनकी वाणियों से अछूता रहे। वे जो कहते थे अनुभव के आधार पर कहते थे। उनकी उक्तियाँ बेधनेवाली और व्यंग्य प्रहार करने वाली होती थी। कबीरदास के अंदर एक ऐसा अखंड, अविचलित विश्वास था जिसने उनकी कविता में एक असाधारण ताकत भर दी जिसके कारण उनकी कविता के भाव सीधे हृदय से निकलकर श्रोता पर चोट करते हैं।

आज हमारे समाज में जो विश्रृंखलता दिखाई दे रही है, और हम जो धार्मिक और सामाजिक विद्वेश के माहौल मेंजीवन जी रहे हैं, ऐसे समय में कबीरदास की शिक्षा महती भूमिका का निर्वाह करती हैं। आज समाज में जितनी तीव्रता से नैतिक और मानवीय मूल्यों का ह्रास हो रहा है, उसे कम करने के लिए आज भी कबीर की अमृतवाणी की आवश्यकता अनुभव होती है। आज भले ही विज्ञान का युग है, मानव बहुत तरक्की कर चुका है, मानव के जीवन में सुख व समृद्धि की खूब वृद्धि हो गई है लेकिन फिर भी वह सही मायने में मानवता को प्राप्त नहीं कर पाया है। मानवता को प्राप्त करके सही मायने में मनुष्य कैसे बने? इसलिए संतों के मार्ग को समझना और उनका अनुसरण करना आवश्यक हो जाता है। ऐसे ही संतुष्टि प्राप्त संत कबीरदास जी हैं, जिन्होंने समाज की विश्रृंखलताओं के विरुद्ध जीवन पर्यंत संघर्ष किया। आज भी समाज मेंजब वैसी ही विद्रूपताएं नजर आती है तो हमेंकबीरदास के संघर्ष एवं उनकी शिक्षाएं स्मरण हो जाती हैं। उनकी आवश्यकता अनुभव होती है, जो यह स्पष्ट करती है कि कबीर और उनकी शिक्षाएं सार्वकालिक, सार्वजनीन और सार्वभौमिक है। कबीर के विषय में हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं – ''ऐसे थे कबीर। सिर से पैर तक मस्त मौला, स्वभाव, आदत से अक्खड़, भक्त के सामने निरीह, भेशधारी के आगे प्रचडं दिल के साफ, दिमाग के दुरस्त, भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अस्पृ य, कर्म से वदंनीय।''[12]

संदर्भ–सूची

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–271
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–132
3. कबीर अनु ाीलन, पृश्ठ–339
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–247
5. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–248–249
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–147
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–271
8. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–174
9. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–147
10. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–170
11. डॉ. हरिनारायण ठाकुर, दलित साहित्य का समाज ाास्त्र, पृश्ठ–214–215
12. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृश्ठ–134